ग़ैरबराबरी की मुस्लिम शादियाँ

मेहजबीं

सैफ अली ख़ान की पहली पत्नी उनसे लगभग 12 साल बड़ी थीं और दूसरी पत्नी इतनी ही या इससे भी ज़्यादा छोटी हैं उनसे। पति - पत्नी की उम्र के इस फ़र्क़ पर मिडिया में भी चर्चा रही और लोगों में भी। पति - पत्नी के बीच उम्र का फ़र्क़ होना चाहिए नहीं होना चाहिए कितना होना चाहिए इस मसले पर लगभग सभी धर्म क्षेत्र बिरादरी के लोगों का एक ही मत है कि पत्नी पति से उम्र में छोटी होनी चाहिए बड़ी नहीं बराबर भी नहीं यही है हमारे समाज का ढांचा ग़ैरबराबरी पर आधारित। सैफ अली ख़ान की पत्नियाँ उनसे बड़ी हैं या छोटी यह उनका और उनकी पत्नियों का ज़ाती मसला है। उन्हें हक़ है अपनी मर्जी से अपनी शरीकेहयात का इंतख़ाब करने का।

एक सेलीब्रिटी की पत्नी उनसे उम्र में पंद्रह बीस साल छोटी है तो लोग और मिडिया उसपर कुछ दिनों के लिए गंभीरता से चर्चा करती है। और आम आदमी निम्न वर्ग मध्य वर्ग की जिंदगी में रोज़मर्रा कितनी ही 15/20 साल की लड़कियों की शादी तीस पार के लड़कों से कर दी जाती है। उनकी उम्र में आधे से ज़्यादा या आधा फ़र्क़ होता है,यह आम बात है बिहार बंगाल के मुस्लिम परिवारों में बल्कि रिवाज़ है यही क़ानून है। कोई फेमिली होगी जो उम्र में कम गैप रखती हो नहीं तो ज़्यादातर फेमिली में दस - पन्द्रह साल का फासला आम बात है। इसपर वहाँ कोई हैरत नहीं कोई गंभीर चिंता नहीं क्योंकि यह नियम उनकी जिंदगी का हिस्सा है।

कुछ पढ़ी - लिखी फेमिली में पांच - सात साल का गैप होता है, बाक़ी सब में वही दस - पन्द्रह साल का। नतीजा यह है बेमेल शादी का की शादी के दस - बारह साल बाद पति बूढ़ा लगने लगता है उसकी जिस्मानी ताक़त श्रम शक्ति घटने लग जाती है, और पत्नी यंग ही रहती है, दोनों एक साथ उस उम्र में अच्छे भी नहीं लगते, पति - पत्नी से पन्द्रह - बीस साल पहले मर भी जाते हैं अधिकतर कम उम्र में ही पत्नी बेवा हो जाती है, बच्चे अनाथ हो जाते हैं। उनके परिवार वाले उन्हें उनका हक़ भी नहीं देते यह कहकर की इस्लाम का क़ानून है, हक़ीक़त यह है इस्लाम में ऐसा कोई क़ानून नहीं की बेवा और यतीम बच्चों को बेसहारा कर दिया जाए उन्हें उनके हक़ से महरूम (वंचित) कर दिया जाए।

अच्छे - अच्छे परिवारों की बेवा औरतें मज़बूरन महानगरों की तरफ़ रुख़ करती हैं और घरों में जाकर सफाई आया बाई का काम करती हैं। जिससे उनकी बुनयादी ज़रूरतें भी पूरी नहीं होती। कुछ अच्छे घरों में काम मिल जाता है तो वहाँ से मज़दूरी के साथ अलग से आर्थिक सहायता और प्यार मिल जाता है, मुसलमान परिवारों से कभी कभार ज़क़ात सदक़ा ख़ैरात भी,जिसके सहारे उनकी जिंदगी बसर होती है। दिल्ली जैसे महानगरों में बंगाल बिहार से आई ऐसी औरतों की बड़ी तादाद में संख्या है। जिसपर कभी किसी का ध्यान केन्द्रित नहीं होता। बंगाल बिहार के मुस्लिम परिवारों में होने वाली इन बेमेल शादियों पर कोई सवाल नहीं उठाता विरोध नहीं करता। खुद बंगाल बिहार की इस तरह की बेमेल शादियों की शिकार महिलाएं भी विरोध नहीं करती क्योंकि उन्हें इल्म ही नहीं कि यह पति - पत्नी के बीच का इतना बड़ा फासला ग़लत है।

तीस पार के लड़के हों या बीस पार के या चालीस साल के सबको नाजुक कमसिन कली ही चाहिए। 22/23/ उम्र की लड़कियों की अगर शादी नहीं हुई तो बिहार में मुस्लिम परिवार में समझा जाता है कि उम्र निकल गई लड़की बहुत बड़ी हो गई। ऐजुकेटिड लड़कियों को भी किसी भी तरह से 22/23/24 से पहले ही बियाहना होता है किसी भी तरह से चाहे शिक्षा अधूरी रह जाए और लड़कों को शिक्षा पूरी करने के बाद पांच दस साल तक नौकरी करके बहुत से माली अधूरे काम करने होते हैं तब जाकर तीस पेंतीस के बाद बियाहते हैं घर वाले। हर बात में इस्लाम को आगे करने वाले यहाँ क्यों इस्लाम को भूल जाते हैं जब लड़कों की इतनी उम्र में शादी करते हैं, दहेज़ में कैश लेते हैं सोने की अंगूठियाँ लेते हैं? और महर में कम रक़म बांधते हैं।दहेज लेते समय और आधी उम्र के लड़कों की शादी करते समय बेवा को बेदख़ल करते समय इस्लाम याद नहीं आता महर की रक़म बांधते समय इस्लाम हैसियत याद आ जाती है।

बिहार से सबसे ज़्यादा शिक्षित लड़के महानगरों में मल्टीनेशनल कंपनियों में न्यूज़ चैनलों में प्रिंट मीडिया में अफसरी में आ रहे हैं मुस्लिम परिवार के भी, मदरसों में भी जमात में भी, और वहीं औरत के साथ मुस्लिम परिवारों में बेमेल शादी दहेज में सोने की अंगूठी कैश लेन - देन बेदख़ली होती है। इस पर बिहार के मुस्लिम शिक्षित गाँधीवादी मार्कसवादी समाजवादी प्रगतिशील विचारशील लड़के कब ग़ौर करेंगे? कब तक दो चेहरे बनाकर रखेंगे? दहेज की मार तो सभी क्षेत्र बिरादरी धर्म की महिलाएं झेल रही हैं, इसपर सभी धर्मों के क्षेत्रों के मार्कसवादी गाँधीवादी समाजवादी लड़के कब प्रेक्टिकली ग़ौर करेंगे?

पूरा का पूरा भाजपाई कुनबा ही मानसिक रूप से बीमार हो गया लगता है

आईआईटी ग्रेजुएट, अमेरिका के प्रतिष्ठित संस्थान से पढ़े लिखे, एक बहुराष्ट्रीय कंपनी में लंबे समय तक काम किये, प्रबुद्ध पिता की प्रबुद्ध संतान, केंद्रीय मंत्री जयंत सिन्हा ने 8 भीड़ हिंसक सजायाफ्ता हत्यारों का माला पहना कर स्वागत किया और त्रिपुरा के मुख्यमंत्री विप्लब देव ने मॉब लिंचिंग को जनता द्वारा लिया जाने वाला एक्शन बता दिया। विप्लब का कहना है कि, यह लोकतंत्र का आनन्द है। यही आनन्द कभी तालिबान ने लेना शुरू किया था, और पूरा मध्य एशिया इसी 'आनन्द' की पिनक में हैं।

एक खबर के अनुसार, जब त्रिपुरा के मुख्यमंत्री से राज्य में बढ़ रही लिंचिंग की घटनाओं के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा, "त्रिपुरा में एक आनन्द की लहर चली हुई है। आप भी इस लहर का उपभोग कीजिए। आपको आनन्द आना चाहिए । मुझे कितनी खुशी हो रही है। ये जनता की सरकार है. जनता एक्शन लेगी"

मुख्यमंत्री कार्यालय और बीजेपी की तरफ से अभी तक बिप्लब देब के बयान पर कोई प्रतिक्रिया नहीं आई है । गौरतलब है कि त्रिपुरा में बाहरी लोगों द्वारा बच्चे चुराने की अफवाह फैलने के बाद पिछले हफ्ते भीड़ ने चार लोगों की पीट-पीटकर हत्या कर दी थी।

जयंत बहुत पढें लिखे शिष्ट और शालीन व्यक्ति हैं लेकिन विप्लब कितने पढें लिखे हैं यह नहीं पता। पर ये दोनों ही भाजपा के बड़े नेता एक बात पर सहमत हैं कि भीड़ हिंसा कोई खास समस्या नहीं है। एक सामूहिक और गिरोहबंद हत्यारों का माला पहना कर स्वागत करता है । और दूसरा, एक निर्दोष को नोचते खसोटते, उसकी हत्या करते हुये बीभत्स दृश्य में भी आनन्द ढूंढता है। लगता है कि पूरा का पूरा कबीला ही अज़ीब मानसिक व्याधि से ग्रस्त हो गया है।

खबर (दार) झरोखा — **विकास नारायण राय**

मोदी राज में आरएसएस का प्रशासनिक जलवा - हर कहीं, हर तरफ़ !

आरएसएस संतुलन से मोदी सरकार में मीडिया लिंचिंग और मॉब लिंचिंग एक दूसरे के पूरक नजर आने लगे हैं!

आरएसएस का आज का प्रशासनिक जलवा देखना है तो उसे मोदी की भाजपा सरकार से संतुलनकारी भूमिका में देखिये। वरना, पहली नजर में यही लगेगा कि सुषमा स्वराज के विदेश मंत्रालय ने जो धर्मान्तरण को मुद्दा बनाने वाले पासपोर्ट अफसर का दंडात्मक तबादला किया, उसमें और जूनियर वित्त मंत्री जयंत सिन्हा के सजायाफ्ता 'गौ रक्षक' हत्यारों को माला पहनाने में कोई सम्बन्ध नहीं है। न मोदी के एक और मंत्री गिरिराज सिंह के सांप्रदायिक हिंसा आरोपियों को बिहार की जेल में जाकर सांत्वना देने और नीतीश कुमार के साम्प्रदायिकता को बर्दाश्त न करने की हालिया बयानबाजी में।

साफ है, आरएसएस को अपने हार्डकोर्ट उच्च जाति अनुयायियों का राजनीतिक ध्यान रखना पड़ेगा ही। हाल में, सुप्रीम कोर्ट के जज आदर्श कुमार गोयल को अवकाश प्राप्ति के साथ ही एनजीटी का चेयरमैन बनाये जाने को, उनके एससी-एसटी एक्ट को कमजोर करने वाले फैसले से जोड़ कर चर्चा रही है। आरएसएस जब-तब जातिगत आरक्षण को भी कमजोर कर सकने वाला इसी मिजाज का फैसला सुप्रीम कोर्ट से हासिल करने की कवायद करता आ रहा है। जबकि इससे उपजे असंतोष को संतुलित करने के दिखावे में कभी मोदी तो कभी अमित शाह को सफाई की मुद्रा में सामने आना पड़ जाता है।

जरूरी नहीं कि आरएसएस की हर संतुलनकारी चाल चर्चा में भी आये। कश्मीर में मोदी-महबूबा गठबंधन के समानांतर 'गोली समाधान' वाले जनरल बिपिन रावत को सीनियर जनरलों की अनदेखी कर सेनाध्यक्ष बनाए जाने का सन्दर्भ मीडिया के नेपथ्य में ही रह गया। हालाँकि, अंतर्राष्ट्रीय मंचों की बाध्यता को ध्यान में रखते हुए मोदी सरकार को कश्मीर में वार्ता का दिखावा करने के लिए अंततः एक 'इंटरलोक्यूटर' भी लगाना पड़ा। वैसे ही, जैसे नेहरू को गरियाने का एजेंडा मोदी निभा रहे हैं और साथ ही नेहरू भक्त प्रणब मुखर्जी को आरएसएस मुख्यालय में दीक्षांत भाषण के लिये आमंत्रित किया जा रहा है।

गवर्नर, मंत्री, प्रोफेसर, निगम-बोर्ड जैसी नियुक्तियों में आरएसएस का कोटा तो जग जाहिर है। लेकिन कम ही पता है कि दिल्ली का पुलिस कमिश्नर बनने के दावेदार को अमित शाह ही नहीं आरएसएस कमांड तक भी अर्जी पहुंचानी पड़ती है। जिन राज्यों में सीधे आरएसएस के कृपा पात्र मुख्यमंत्री हैं, वहां मलाईदार प्रशासनिक पदों पर लगने के लिए आरएसएस का वरदहस्त भी चाहिए। इस परिप्रेक्ष्य में, सुप्रीम कोर्ट के राज्यों को मॉब लिंचिंग को रोकने के ताजा निर्देश की व्यर्थता को महसूस कीजिये। दिल्ली में दीवाली में पटाखा नियंत्रण या महाराष्ट्र में बाल गोविन्दाओं के मटकी फोड़ने पर रोक जैसे सुप्रीम कोर्ट आदेशों का हश्र याद कीजिए।

असीमानंद को तमाम आतंकी मुकदमों से बरी कराना मोदी सरकार का राष्ट्रीय एजेंडा यूँ ही नहीं बन गया। 'भगवा आतंकवाद' को नकारना आरएसएस के लिए जीवन-मरण जैसा मुद्दा बना हुआ है। उसके वरिष्ठ प्रचारक रहे असीमानंद को दो आतंकी बम-कांडों, अजमेर शरीफ और मक्का मस्जिद मामलों से बरी कराया जा चुका है। समझौता एक्सप्रेस बम काण्ड से भी उसको बरी करने की पूरी तैयारी है। इसके लिए सरकारी गवाहों को स्वयं मोदी की जांच एजेंसी एनआइए ने बैठाया, जिसका काम अन्यथा असीमानंद को सजा दिलाना था।

कायदे से अदालत में केस कमजोर करने के लिए एनआइए की खासी खबर ली जानी चाहिए थी। लेकिन, इसके उलट, पहले एनआईए चीफ शरद कुमार को दो वर्ष की सेवा वृद्धि दी गयी और अब सेवा निवृत्ति के बाद पुरस्कार स्वरूप उन्हें सेंट्रल विजिलेंस कमीशन में नामित कर दिया गया। याद रहे कांग्रेस शासन में असीमानंद की गिरफ्तारी के समय भी आरएसएस ने आडवानी समेत भाजपा के कई शीर्ष नेताओं से विरोध स्वरूप बयान दिलवाये थे। इसी तरह समझौता मामले को लेकर मोदी सरकार के वरिष्ठ मंत्री अरुण जेटली और कानून मंत्री रविशंकर प्रसाद से भी उसी अंदाज के बयान दिलवाये गये हैं।

सत्ता में प्रशासनिक संतुलन का ठेठ असंवैधानिक जलवा कोई पहली बार नहीं देख रहा है देश। इंदिरा गाँधी-संजय गांधी के अधिनायकवादी और दस जनपथ-मनमोहन सिंह के कठपुतली समीकरण भूले नहीं जा सकते। कितने ही तरह के मुख्यमंत्रियों के उदाहरण सामने हैं जिनके निजाम में उनके परिवार का प्रशासनिक दखल किसी भी कानूनी या संवैधानिक बंदिश को न मानने वाला रहा है। इस लिहाज से बेशक वर्तमान आरएसएस दौर में कुछ नया न भी हो, लेकिन प्रशासन के विघटन से राष्ट्र और समाज के विघटन की आज जैसे स्तर पर पहुंची खतरनाक संभावना शायद ही पहले कभी बनी होगी।

क्योंकि, आरएसएस दखल का स्वरूप, बहुसंख्यक अलगाववाद के रास्ते पर एक ठेठ सवर्णवादी एजेंडा से कम कुछ नहीं हो सकता। मोदी सरकार में यह मध्ययुगीन एजेंडा, विकास की सवारी अपने लिए गाँठने और आधुनिकता को मनचाहा नाथने को स्वतंत्र है। पुरातनपंथी राष्ट्रवाद के आगे आधुनिक राष्ट्र निर्माण की हैसियत घटी है। मीडिया लिंचिंग और मॉब लिंचिंग एक दूसरे के पूरक नजर आने लगे हैं!

मसलन, वर्षों से कश्मीर में दो स्थाई फ्रंटियर होते थे- पाकिस्तान बॉर्डर और अलगाववादी उग्रवाद। आरएसएस के दखल ने वहां दो फ्रंटियर और स्थाई कर दिए लगते हैं- सेना बनाम नागरिक और राष्ट्र बनाम कश्मीर। मसलन, देश में रोजगार और महंगाई के पारंपरिक फ्रंटियर इस संतुलनकारी दखल की बदौलत इतिहासवाद और सैन्यवाद की भेंट चढ़ गए हैं। मसलन, तिरंगा, जन-गण-मन, और गाँधी जैसे राष्ट्रीय प्रतीकों को संतुलित करने में भगवा, बन्दे मातरम् और गाय जैसे धार्मिक प्रतीक लगे मिलेंगे।

दरअसल, आरएसएस और मोदी सरकार का यह संतुलनकारी समीकरण, भारतीय संविधान में विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के परस्पर संतुलन को फिलहाल दीमक की तरह चट कर रहा है। पर्याप्त कमजोर करने के बाद वह इसके स्थायित्व को किसी झटके में धराशायी भी कर सकता है।

(अवकाश प्राप्त आईपीएस विकास नारायण राय, हरियाणा के डीजीपी और नेशनल पुलिस अकादमी, हैदराबाद के निदेशक रह चुके हैं।)

मुकेश अम्बानी को मोदी का एक हज़ार करोड़ का तोहफ़ा

सरकार ने रिलायंस के जिओ इंस्टीटूट को सबसे बेहतर शिक्षा संस्थानों में से एक घोषित किया है। अब इसे एक हज़ार करोड़ की ग्रांट मोदी सरकार उसे देगी।

इंस्टिट्यूट है तो वह बेहतर भी हो सकता है। बेहतर होना किसी की बपौती तो नहीं। जिओ इंस्टिट्यूट अगर बेहतर काम करता है तो इसे बेहतर कहने में क्या बुराई है? लेकिन यहां एक दो पेंच हैं।

पहला यह कि सरकारी संस्थानों की हालत क्यों इतनी बुरी है जो प्राइवेट संस्थान को बेहतर बताया जाए? दूसरा यह कि असल में रिलायंस जिओ इंस्टिट्यूट नाम का कोई संस्थान है ही नहीं। यह सिर्फ कागजों में मौजूद है, असल में नहीं। तो ऐसा क्या हुआ जो मोदी सरकार ने इसे बेहतर संस्थान घोषित कर दिया?

इसके दो कारण हैं। पहला कारण तो जाहिर सा है। पूंजीपति वर्ग ही पूंजीवाद में असल मालिक होता है और सरकार उसकी मैनेजिंग कमेटी का काम करती है। सो मालिक ने कहा तो सरकार ने घोषित कर दिया। मोदी सरकार तो वैसे भी फासिस्ट है तो जाहिर है मालिक वर्ग के प्रति इसकी वफादारी ज्यादा रहेगी। दूसरा कारण यह है कि हमारा देश जमीन पर परफॉर्म करे या न करे, कागजों पर बहुत बढ़िया करता है। और कागजों से ज्यादा हवा में। हरिशंकर परसाई की एक लघुकथा है-

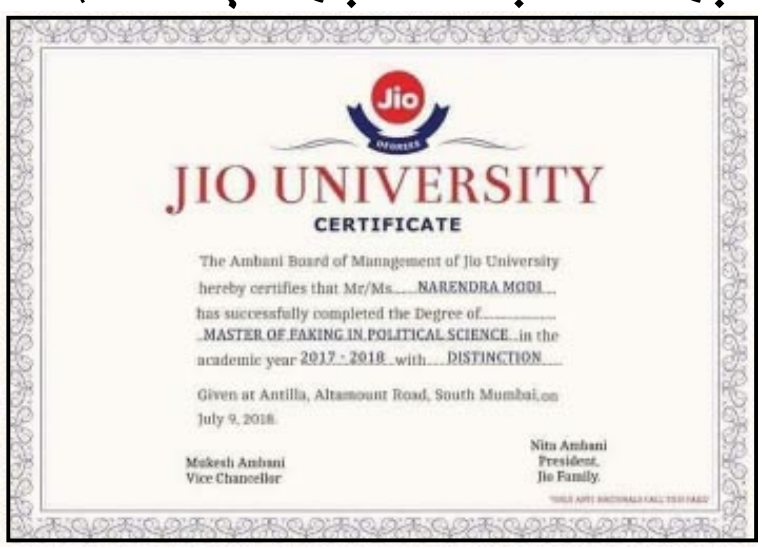

....एक दिन एक किसान सरकार से मिला और उसने कहा - "हुजूर हम किसानों को आप जमीन, पानी और बीज दिला दीजिए और अपने अफसरों से हमारी रक्षा कीजिए, तो हम देश के लिए पूरा अनाज पैदा कर देंगे।"

सरकारी प्रवक्ता ने जवाब दिया - "अन्न की पैदावार के लिए किसान की अब जरूरत नहीं है। हम दस लाख एकड़ कागज पर अन्न पैदा कर रहे हैं।"....

यह व्यंग्य सही अर्थों में सरकार के चरित्र को बयान करता है। कागजों पर अन्न पैदा हो कर भूखी जनता को मिल जाए, कागजों पर स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार मिल जाए। और क्या चाहिए? पिछले दिनों सरकार का बयान आया कि देश में रोजगार बहुत है। बस हमारे पास आंकड़े नहीं हैं। अब चूंकि कमी आंकड़ों की है तो कागजों पर आंकड़े बनाने का काम चल रहा है। जैसे ही यह काम पूरा हुआ, देश में बेरोजगारी की समस्या खत्म। शिक्षा तो खैर रिलायंस ने दे ही दी है। कागजों पर।